१ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

श्री
दसम ग्रंथ साहिब

(हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण)

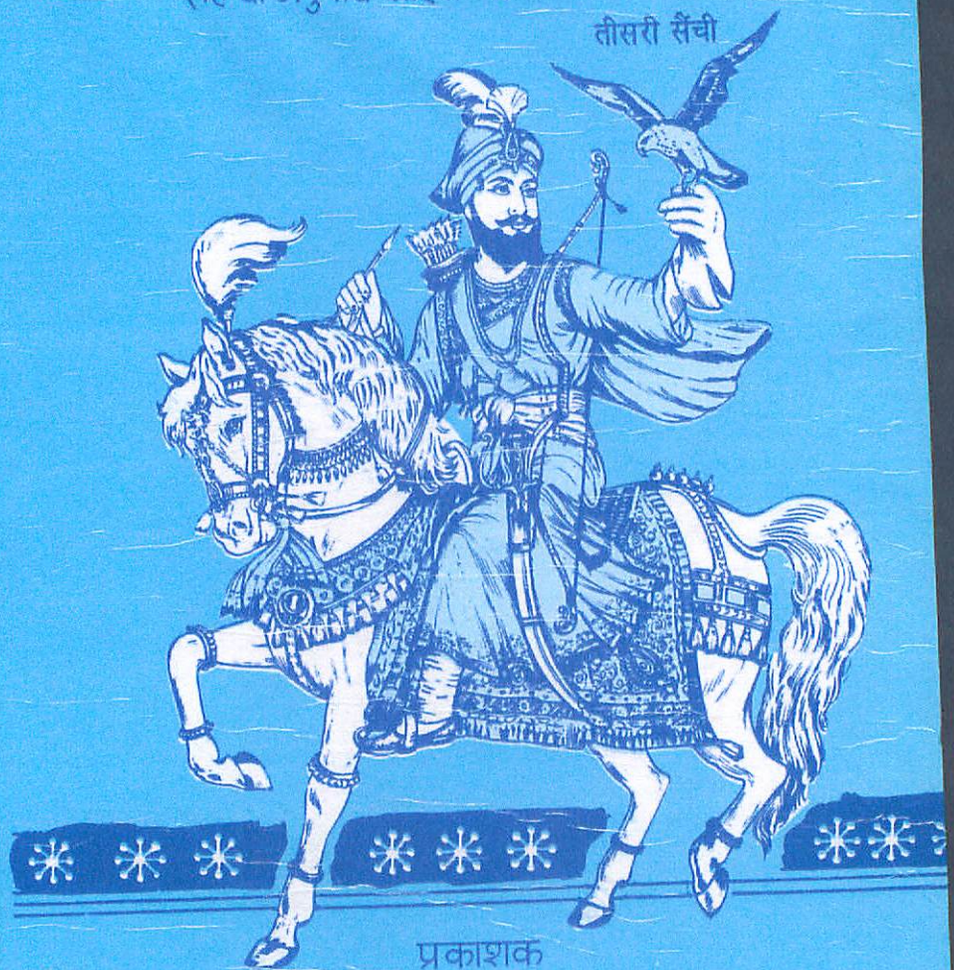

तीसरी सैंची

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

मौसमबाग़ (सीतापुर रोड), लखनऊ-२२६ ०२०

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥

स्त्री

दसम ग्रंथ साहिब

(तीसरी सैंची)

(हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण)

अनुवादक

डॉ० जोधसिंह

एम० ए०, पीएच्० डी०, साहित्य रत्न

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

मौसमबाग़ (सीतापुर रोड), लखनऊ-२२६०२०

सुनी कान ऐसी न वैसी निहारी। भई है न आगे न ह्वैहै कुमारी॥ ४॥ मनौ आपु लै हाथ ब्रहमै बनाई। किधौ देव जानी किधौ मैन जाई। भई नाहि नहि है न ह्वैहै त्रिवैसी। मनो जच्छनी नागनी किंन्नरैसी॥ ५॥ तिनक देस के राव सौ नेह ठान्यो। महा चतुर तिह चित्त के बीच जान्यो। अधिक रूप आनूप ताको बिराजै। लखे जाहि कंद्रप को द्रप्प भाजै॥ ६॥ ॥दोहरा॥ अधिक प्रीत तासौ करी चित मै चतुर पछान। छाडि दई लज्जा सभै बधी बिरह के बान॥ ७॥ ॥तोटक छंद॥ लखि रूप लला जू को रीझ रही। जिह जोत प्रभा नहि जात कही। निस एक त्रिया तिह बोल लियो। मन भावत भूप सौ भोग कियो॥ ८॥ सिगरी निस भूप सौ भोग कर्‌यो। इह बीच त्रिया पति आन पर्‌यो। तिह आवत जानि डरी हिय मै। इह भाँति चरित्र ठट्‌यो जिय मै॥ ९॥ ॥दोहरा॥ तकिया करि राख्यो त्रिपहि अपणी सेज बणाइ। जाइ पियहि आगे लियो परम प्रीति उपजाइ॥ १०॥ भूप लख्यो चित (मू०पं०८३७) मै फस्यो आनि त्रिय के हेत। अधिक चित्त भीतर डर्‌यो स्वास न ऊचै लेत॥ ११॥

न तो ऐसी सुन्दर कोई स्त्री हुई है और न ही होगी॥ ४॥ उसे मानों ब्रह्मा ने अपने हाथ से बनाया हो। वह देवयानी (शुक्राचार्य की पुत्री) थी अथवा कामदेव से उत्पन्न हुई थी। ऐसी स्त्री न तो हुई, न है, न होगी। वह मानो यक्षिणी, नागिनी अथवा किन्नरनी थी॥ ५॥ उसने उस देश के राजा से प्रेम शुरू किया और राजा ने भी उसे चित्त में अत्यन्त चतुर समझा। उसका रूप अत्यन्त शोभायुक्त था और उसे देखकर कामदेव का गर्व भी चूर हो जाता था॥ ६॥ ॥दोहा॥ उस चतुर स्त्री ने राजा से बहुत प्रेम किया और सब लज्जा को त्यागकर उसके विरह-बाण से बिंध गई॥ ७॥ ॥तोटक छंद॥ अपने प्रियतम के रूप को देखकर वह रीझ उठी। उसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। एक रात उस स्त्री ने राजा को बुलाया और अपनी इच्छानुसार उससे भोग किया॥ ८॥ सारी रात वह राजा के साथ रति-क्रीड़ा में संलग्न रही और इसी बीच उस स्त्री का पति आ गया। उसे आते देखकर वह मन में डर गई और उसने इस प्रकार प्रपंच किया॥ ९॥ ॥दोहा॥ राजा को तकिया बनाकर उसने अपनी शय्या पर रख लिया और पूरे प्रेम से पति की अगवानी की॥ १०॥ राजा समझ गया कि मैं स्त्री-प्रेम में फँस गया हूँ। वह चित्त में अत्यधिक डर गया इसलिए वह साँस भी ऊँचे नहीं ले रहा था॥

पति सौ अति रति मानि कै रही गरे लपटाइ। कियो सिरानो भूप को सोइ रहै सुख पाइ॥ १२॥ भोर भए उठि पिय गयो त्रिप सो भोग कमाइ। काढि सिराने ते तुरतु सदन दियो पहुचाइ॥ १३॥ जे स्याने ह्वै जगत मै तिय सो करत पियार। ताँहि महाँ जड़ समुझियै चित भीतर निरधार॥ १४॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे बीसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २०॥ ३७८॥ अफजूँ॥

अथ इकीसवों चरित्र कथनं॥

॥दोहरा॥ भूप बंदग्रहि निजु सुतहि गहि करि दियो पठाइ। प्रात समै मंत्री सहित बहुरो लियो बुलाइ॥ १॥ रीझ राइ ऐसे कह्यो बचन मंत्रियन संग। पुरख त्रियन चतुरन चरित मोसो कहहु प्रसंग॥ २॥ तीर सतुद्द्रव के हुतो पुरअनंद इक गाँउ। नेत्र तुंग के ढिग बसत काहलूर के ठाउ॥ ३॥ तहाँ सिक्ख साखा बहुत आवत मोद बढाइ।

११॥ वह पति से सुखपूर्वक रतिक्रीड़ा करते हुए उसके गले लिपटी रही और वे दोनों राजा को तकिया बनाकर सुखपूर्वक सोए रहे॥ १२॥ प्रातः होते ही पति गया तो उसने राजा से भी भोग किया और तकिए से उसे निकालकर तुरन्त उसके घर पहुँचा दिया॥ १३॥ जो बुद्धिमान होकर भी इस संसार में स्त्री के प्रेम में लीन होते हैं उन्हें बिना किसी संदेह के जड़ (मूर्ख) समझना चाहिए॥ १४॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में बीसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति॥ २०॥ ३७८॥ अफजू॥

इक्कीसवाँ चरित्र-कथन

॥दोहा॥ राजा ने अपने पुत्र को पकड़कर बंदीगृह में भेज दिया और प्रातः मंत्री-सहित उसे बुला लिया॥ १॥ राजा ने प्रसन्न होकर मंत्री से कहा कि चतुर स्त्री-पुरुषों की चरित्र की कथा मुझे सुनाओ॥ २॥ सतलुज के किनारे आनन्दपुर नामक एक गाँव था, जो नेत्रतुंग पर्वतमाला के पास कहलूर के निकट था॥ ३॥ वहाँ बहुत से सिक्ख प्रसन्नतापूर्वक आते थे और मनोवांछित वरदान प्राप्त कर सुखपूर्वक अपने घरों को वापस जाते थे॥ ४॥

मन बांछत मुखि माँग वर जात ग्रहिन सुख पाइ॥ ४ ॥ एक त्रिया धनवंत की तौन नगर मै आनि। हेरि राइ पीड़त भई बिधी बिरह के बान॥ ५ ॥ मगनदास ता को हुतो सो तिन लियो बुलाइ। कछुक दरब ता को दियो ऐसे कर्‌यो बनाइ॥ ६ ॥ नगर राइ तुमरो बसत ताहि मिलावहु मोहि। ताहि मिले दैहो तुझै अमित दरब लै तोहि॥ ७ ॥ मगन लोभ धन के लगे आनि राव के पास। परि पाइनि कर जोरि करि इह बिधि कि अरदासि॥ ८ ॥ सिख्यो चहत जो मंत्र तुम सो आयो मुर हाथ। कहै तुमैं से कीजियहु जु कछु तुहारे साथ॥ ९ ॥ ॥ भुजंग छंद॥ चल्यो धारि आतीत को भेस राई। मनापन बिखै स्री भगौती मनाई। चल्यो सो तता के फिर्‌यो नाहि फेरे। धस्यो जाइकै वा त्रिया के सु डेरे॥ १० ॥ ॥ चौपई॥ लखि त्रिय ताहि सु भेख बनायो। फूल पान अरु कैफ मँगायो। आगे टरि ता को तिन लीना। चित को शोक दूरि करि दीना॥ ११ ॥ ॥ दोहरा॥ बस्त्र पहिरि बहु मोल को अतिथ भेस को डारि। तवन सेज सोभित (मू०भं०८३८) करी उत्तम भेख सुधारि॥ १२ ॥

एक धनवान की स्त्री उस नगर के राजा को देखकर उस पर आसक्त हो गई और विरह-बाण से बिंध गई॥ ५ ॥ उसका एक सेवक मगनदास था उसे उसने बुलाया और इस प्रकार समझाकर कहा॥ ६ ॥ तुम मुझे अपने नगर के राजा से मिलवा दो उससे मिलन होने पर मैं तुमको अपरिमित द्रव्य दूँगी॥ ७ ॥ मगन धन के लालच में आकर राजा के पास आया और उसके चरणों पर गिरकर उसने प्रार्थना की॥ ८ ॥ आप जो मंत्र सीखना चाहते थे वह मेरे हाथ आ गया है अतः उसे जानने के लिए जैसे मैं कहूँ वैसा ही करो॥ ९ ॥ ॥ भुजंग छंद॥ वह राजा तपस्वी का वेश बनाकर मन में भगवती का स्मरण करता हुआ चला। वह चलता ही चला गया और इस प्रकार बिना मुड़े वह स्त्री के निवास में आ पहुँचा॥ १० ॥ ॥ चौपाई॥ स्त्री उसे देखकर सज-धज गई और उसने उसके लिए फूल, पान एवं मदिरा आदि मँगाई। स्वयं आगे पहुँचकर उसने उसका स्वागत किया और चित्त का शोक समाप्त कर दिया॥ ११ ॥ ॥ दोहा॥ राजा ने तपस्वियों के वेश को छोड़कर पुनः मूल्यवान वस्त्र पहने और उसकी शय्या को शोभायुक्त बनाया॥ १२ ॥ तब उस स्त्री ने कहा कि मेरे साथ संभोग करो क्योंकि मैं कामदेव से दुखी होकर तुम्हारे हाथ बिक चुकी हूँ॥ १३ ॥ राजा ने मन में सोचा कि मैं तो मंत्र सीखने आया था

तब तासो त्रिय यो कही भो करहु मुहि साथ। पसुपतारि दुख दै धनो मै बेची तव हाथ॥ १३ ॥ राइ चित्त चिंता करी बैठे ताही ठौर। मंत्र लैन आयो हुतो भई और की और॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल॥ भए पूज तो कहा गुमान न कीजियै। धनी भए तो दुख्यन निधन न दीजियै। रूप भयो तो कहा ऐंठ नहि ठानियै। हो धन जोबन दिन चारि पहूनो जानियै॥ १५ ॥ ॥ छंद॥ धरम करे सुभ जनम धरम ते रूपहि पैयै। धरम करे धन धाम धरम ते राज सुहैयै। कह्यो तुहारो मानि धरम कैसे कै छोरों। महाँ नरक के बीच देह अपनी क्यों बोरों॥ १६ ॥ कह्यो तुहारो मानि भोग तोसो नहि करिहो। कुलि कलंक के हेत अधिक मन भीतर डरिहो। छोरि ब्याहिता नारि केल तोसों न कमाऊँ। धरमराज की सभा ठौर कैसे करि पाऊँ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा॥ कामातुर ह्वै जो त्रिया आवत नर के पास। महा नरक सो डारियै दै जो जान निरास॥ १८ ॥ पाइ परत मोरो सदा पूज कहत है मोहि। तासो रीझ रम्यो चहत लाज न आवत तोहि॥ १९ ॥ क्रिशन पूज जग के भए कीनी रासि बनाइ।

यह तो कुछ और ही बात बन गई है॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल॥ यदि पूज्य समझे जाओ तो मन में अभिमान नहीं करना चाहिए; धनी होकर निर्धन को दुःख नहीं देना चाहिए; रूपवान होकर अकड़ना नहीं चाहिए और धन-यौवन को चार दिन का मेहमान ही जानना चाहिए॥ १५ ॥ ॥ छंद॥ इस जन्म में धर्म का कार्य करने से सुन्दर स्वरूप की प्राप्ति होती है। धर्म से ही धन-धाम एवं राज्य की शोभा बढ़ती है। तुम्हारा कहना मानकर मैं कैसे धर्म का त्याग कर दूँ और क्यों मैं अपने शरीर को महानरक में डुबाऊँ॥ १६ ॥ तुम्हारा कहना मानकर मैं तुमसे भोग नहीं करूँगा और कुल को कलंक लगने के भय से मैं अवश्य डरूँगा। अपनी ब्याहता पत्नी को छोड़कर मैं तुम्हारे साथ रतिक्रिया नहीं करूँगा और यदि मैं ऐसा करूँगा तो धर्मराज की सभा में मुझे स्थान क्योंकर मिलेगा॥ १७ ॥ ॥ दोहा॥ कामातुर स्त्री जब पुरुष के पास आती है और यदि वह पुरुष उसे निराश भेजता है तो उस पुरुष को महानरक में डाला जाना चाहिए॥ १८ ॥ लोग मेरे चरणों पर गिरते हैं, मेरी पूजा करते हैं। मैं रीझकर तुम्हारे साथ रमण करूँ, क्या ऐसा कहते तुझे लज्जा नहीं आती॥ १९ ॥ कृष्ण भी जगत के लिए पूज्य थे, परन्तु उन्होंने भी रासलीलाएँ कीं। उन्होंने राधिका से भोग किया, परन्तु वे नरक में नहीं गये॥ २० ॥

भोग राधिका सो करे परे नरक नहि जाइ ॥ २० ॥ पंच तत्त लै ब्रहम कर कीनी नर की देह। किया आपही तिन बिखै इसत्री पुरख सनेह ॥ २१ ॥ ॥ चौपई ॥ ता ते आन रमो मोहि संगा। ब्यापत मुर तन अधिक अनंगा। आज मिले तुमरे बिनु मरिहों। बिरहानल के भीतर जरिहों ॥ २२ ॥ ॥ दोहरा ॥ अंग ते भयो अनंग तौ देत मोहि दुख आइ। महाँ रुद्र जू को पकरि ताहि न दयो जराइ ॥ २३ ॥ ॥ छंद ॥ धरहु धीरज मन बाल मदन तुमरो कस करिहै। महाँ रुद्र को ध्यान धरो मन बीच सु डरिहै। हम न तुमारे संग भोग रुचि मानि करैगे। त्यागि धरम की नारि तोहि कबहूँ न बरैगे ॥ २४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कह्यो तिहारो मानि भोग तोसो क्यों करियै। घोर नरक के बीच जाइ परबे ते डरियै। तव आलिंगन करे धरम अरिकै मुहि गहिहै। हो अति अपजस की कथा जगत मोकौ नित कहिहै ॥ २५ ॥ चलैं निंद की कथा बक्त्र कस तिसै दिखैहौ। धरमराज की सभा ज्वाब (मू०ग्रं०८३९) कैसे करि दैहौ। छाडि यराना बाल ख्याल हमरे नहि परियै।

परमात्मा ने स्वयं पंचतत्त्वों से पुरुष की देह बनायी है और स्वयं उसमें स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण का सृजन किया है ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ इसलिए मेरे साथ रमण करो, अब मेरे शरीर में अत्यधिक कामदेव व्याप्त हो गया है। आज तुमसे मिलन के बिना मैं मर जाऊँगी और विरहाग्नि में जल मरूँगी ॥ २२ ॥ ॥ दोहा ॥ यह अंग से अनंग होकर भी कामदेव मुझे दुःख दे रहा है। इसी दुःख के कारण रुद्र ने शायद इसे जला दिया था ॥ २३ ॥ ॥ छंद ॥ हे स्त्री! तुम मन में धैर्य रखो, कामदेव तुम्हारा कुछ नहीं कर सकेगा। तुम महारुद्र का मन में ध्यान करो, यह डर जायगा। मैं तुम्हारे साथ भोग नहीं करूँगा और अपनी धर्मपत्नी को त्यागकर तुम्हारा वरण नहीं करूँगा ॥ २४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तुम्हारा कहना मानकर तुमसे संभोगरत क्यों होऊँ। मुझे घोर नरक में पड़ने से डरना चाहिए। तुमसे आलिंगन करना धर्म को शत्रु समझने के बराबर होगा और मेरे अपयश की कथा इस जगत में सदैव चलती रहेगी ॥ २५ ॥ निंदा की कथा चलने पर मैं संसार को मुँह कैसे दिखाऊँगी और धर्मराज की सभा में कैसे उत्तर दूँगा। इस दोस्ती का विचार छोड़ो और हे सुन्दरी! मेरा ख्याल छोड़ो। अब तक जो मुझसे कहा सो कहा अब और कुछ मत कहना ॥ २६ ॥ अनूपकुँवरि ने कहा कि हे प्रिय! मेरे साथ

कही सु हम सों कही बहुरि यह कह्यो न करियै ॥ २६ ॥ नूप कुअरि यौ कही भोग मोसौ पिय करियै। परे न नरक के बीच अधिक चित माहि न डरियै। निंद तिहारी लोग कहा करि कै मुख करि है। त्रास तिहारे सौ सु अधिक चित भीतर डरिहै ॥ २७ ॥ तौ करिहै कोऊ निंद कछू जब भेद लहैंगे। जौ लखिहै कोऊ बात त्रास तो मोनि रहैंगे। आजु हमारे साथ मित्र रुचि सौ रति करियै। हो ना तर छाडौ टाँग तरे अबि होइ निकरियै ॥ २८ ॥ टाँग तरे सो जाइ केल कै जाहि न आवै। बैठि निफुंसक रहै रैनि सिगरी न बजावै। बधे धरम के मै न भोग तुहि साथ करत हों। जग अपजस के हेत अधिक चित बीच डरत हों ॥ २९ ॥ कोटि जतन तुम करो भजे बिनु तोहि न छोरों। गहि आपन पर आजु सगर तो को निस तोरों। मीत तिहारे हेत कासि करवत हूँ लैहों। हो धरमराज की सभा ज्वाब ठाढी ह्वै दैहों ॥ ३० ॥ आजु पिया तव संगि सेजु रुचि मान सुहैहों। मन भावत को भोग रुचित चित माहि कमैंहों।

भोग करो। आप नरक में नहीं जायँगे और व्यर्थ ही इस विचार से मत डरिए। तुम्हारी निंदा लोग कैसे करेंगे, क्योंकि वे तुम्हारा बहुत भय मानते हैं ॥ २७ ॥ फिर तुम्हारी निंदा तो कोई तब करेगा जब कोई इस रहस्य को जानेगा। और फिर यदि कोई जान भी लेगा तो मारे डर के चुप रहेगा। हे मित्र! आज तुम रुचिपूर्वक मेरे साथ रतिक्रीड़ा करो और नहीं तो मेरी टाँग के नीचे से निकल जाओ ॥ २८ ॥ टाँग के नीचे से वह जाय जो केलिक्रीड़ा न जानता हो और नपुंसक की तरह रात भर बैठकर रात्रि का उपभोग न कर सकता हो। मैं तो धर्म का बँधा तुम्हारे साथ भोग नहीं कर रहा हूँ और यश-अपयश से अत्यधिक डर रहा हूँ ॥ २९ ॥ तुम अनेकों यत्न कर लो पर मैं तुम्हें आज भोगे बिना नहीं छोड़ूँगी। आज मैं अपने हाथ से पकड़कर सारी रात तुमको चूर-चूर करूँगी। हे मित्र! मैं तुम्हारे लिए काशी में आरा से चिर जाऊँगी और धर्मराज की सभा में मैं खड़ी होकर जवाब दूँगी ॥ ३० ॥ हे प्रियतम! आज तुम्हारे साथ रुचिपूर्वक शय्या-गमन करूँगी और मनोनुकूल भोग भोगूँगी। आज रात तुम्हारे साथ संभोग करके मैं तुम्हारे सौंदर्य को और बढ़ा दूँगी और तुम्हारे साथ मिलकर कामदेव का दर्प भी दूर कर दूँगी ॥ ३१ ॥

आजु सु रति सभ रैनि भोग सुंदर तव करिहों। शिव बैरी को द्रप सकल मिलि तुमै प्रहरि हों।। ३१।। ।। राइ बाच।। प्रथम छत्रि के धाम दियौ बिधि जनम हमारो। बहुरि जगत के बीच कियो कुल अधिक उचारो। बहुरि सभन मै बैठि आपु को पूज कहाऊँ। हो रमों तुहारे साथ नीच कुल जनमहि पाऊँ।। ३२।। कहा जनम की बात जनम सभ करे तिहारे। रमो न हम सों आजु ऐस घटि भाग हमारे। बिरह तिहारे लाल बैठि पावक मों बरियै। हो पीव हलाहल आजु मिले तुमरे बिनु मरियै।। ३३।। ।। दोहरा।। राइ डर्यो जउ दै मुझै स्री भगवति की आन। शंक त्यागि यासो रमो करिहौ नरक पयान।। ३४।। चित के शोक निवरत करि रमो हमारे संग। मिले तिहारे बिनु अधिक ब्यापत मोहि अनंग।। ३५।। नरक परन ते मै डरो करो न तुम सो संग। तो तन मो तन कैसऊ ब्यापत अधिक अनंग।। ३६।। (मू०ग्रं०८४०)।। छंद।। तरुन कर्यो बिधि तोहि तरुनि ही देह हमारो। लखे तुमै तन आजु मदन बसि भयो हमारो। मन को भरम निहारि भोग मोरे संगि करियै।

।। राजा उवाच।। पहले तो परमात्मा ने क्षत्रिय-कुल में हमें जन्म दिया है पुनः हमारे कुल का संसार में अत्यधिक सम्मान है। फिर सबके बीच बैठकर मैं अपने को पूज्य कहलाता हूँ। अब यदि मैं तुम्हारे साथ रमण करता हूँ तो नीचकुल में जन्म लूँगा।। ३२।। जन्म की क्या बात करते हो ये सब तुम्हारे ही बनाए हुए हैं। यदि आज तुम मेरे साथ रमण नहीं करोगे तो यह मेरा दुर्भाग्य होगा। मैं तुम्हारे विरह में ही अग्नि में जल जाऊँगी और तुमसे मिले बिना ज़हर पीकर मर जाऊँगी।। ३३।। ।। दोहा।। राजा डर गया कि यदि मुझे यह भगवती की सौगंध दे देगी तो मुझे निस्संकोच होकर इससे रमण करना पड़ेगा और नरक जाना पड़ेगा।। ३४।। हे राजन्! चित्त का शोक निवृत्त कर मेरे साथ रमण करो, क्योंकि तुमसे मिले बिना मुझे कामदेव अधिक प्रभावित कर रहा है।। ३५।। तुम्हारे और मेरे तन में कितना ही अधिक काम व्याप्त हो जाय पर नरक के भय से मैं तुम्हारे साथ भोग नहीं भोगूँगा।। ३६।। ।। छंद।। विधाता ने तुम्हें तरुण बनाया है और मेरी देह भी तरुण है। तुम्हें देखकर मेरा मन कामवश हो गया है। मन का भ्रम दूर कर मेरे साथ भोग करो और नरक के भय से मन में बिलकुल मत डरो।। ३७।। जो तरुणी पूज्य

नरक परन ते नैक अपन चित बीच न डरियै।। ३७।। ।। दोहरा।। पूज जानि कर जो तरुनि मुरिकै करत पयान। तवनि तरुनि गुर तवन को लागत सुता समान।। ३८।। ।। छंद।। कहा तरुनि सो प्रीति नेह नहि ओर निबाहहि। एक पुरख कौ छाडि और सुंदर नर चाहहि। अधिक तरुन रुचि मानि तरुनि जासों हित करही। हो तुरतु मूत्र को धाम नगर आगे करि धरही।। ३९।। ।। दोहरा।। कहाँ करौ कैसे बचौ हिदै न उपजत शांत। तोहि मारि कैसे जियो बचन नेह के नात।। ४०।। ।। चौपई।। राइ चित इह भाँति बिचारो। इहाँ सिक्ख कोऊ न हमारो। याहि भजे मेरो ध्रमु जाई। भाजि चलौ त्रिय देत गहाई।। ४१।। ता ते याकी उसतति करो। चरित्र खेलि याको परहरो। बिनु रति करै तरनि जिय मारै। कवन सिक्ख्य मुहि आनि उबारै।। ४२।। ।। अड़िल्ल छंद।। धन्य तरुनि तव रूप धन्य पितु मात तिहारो। धन्य तिहारो देस धन्य प्रतिपालन हारो। धन्य कुअरि तव बक्त्र अधिक जामै छबि छाजै।

जानकर हमारे पास से जाती है वह तरुणी गुरु की पुत्री के समान मानी जाती है।। ३८।। ।। छंद।। तरुणियों से प्रेम का क्या कहना; वे कभी भी प्रेम नहीं निभातीं और एक पुरुष को छोड़कर अन्य सुन्दर पुरुषों की कामना करने लगती हैं। जिस भी तरुण व्यक्ति से तरुणी अधिक प्रेम प्रदर्शित करती है, उसके सामने तुरन्त नग्न हो प्रस्तुत हो जाती है (अर्थात् स्त्री को तनिक भी लज्जा नहीं होती)।। ३९।। क्या करूँ, कैसे करूँ, मन अशान्त हो गया है। तुम्हारे वचन प्रेम से सराबोर हैं। तुम्हें मारकर कैसे जीवित रहूँ।। ४०।। ।। चौपाई।। राजा ने चित्त में यह विचार किया कि यहाँ हमारा सेवक भी कोई नहीं है। यदि मैं इसके साथ रमण करता हूँ तो धर्म जाता है और भागता हूँ तो यह स्त्री पकड़वा देगी।। ४१।। इसलिए इसकी प्रशंसा करो और प्रपंच बनाकर इसका त्याग करो। बिना भोग किए यह स्त्री मार डालेगी। कितना ही अच्छा हो यदि कोई मेरा शिष्य सेवक आकर मेरा उद्धार कर दे।। ४२।। ।। अड़िल्ल छंद।। हे तरुणी! तुम्हारा रूप, सौंदर्य, माता-पिता, देश, पालक सब धन्य हैं। तुम्हारे मुख की छवि इतनी अनुपम है कि कमल, सूर्य, चन्द्र एवं कामदेव भी इसे देखकर भाग खड़े होंगे।। ४३।। तुम्हारा शरीर और चंचल

हो जलज सूर अरु चंद्र द्रप कंद्रप लखि भाजै ॥ ४३ ॥ सुभ सुहाग तन भरे चारु चंचल चखु सोहहि। खग म्रिग जच्छ भुजंग असुर सुर नर मुनि मोहहि। शिव सनकादिक थकित रहित लखि नेत्र तिहारे। हो अति असचरज की बात चुभत नहि हिदै हमारे ॥ ४४ ॥ ॥ सवैया ॥ पौढती अंक प्रजंक ललां को लै काहू सों भेद न भाखत जी को। केल कमात बिहात सदा निसि मैन कलोलन लागत फीको। जागत लाज बढी तह मै डर लागत है सजनी सभ ही को। ता ते बिचारत हो चित मै इह जागन ते सखि सोवन नीको ॥ ४५ ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुर त्रिया तिह राइ सो यौ बच कहियो सुनाइ। आज भोग तोसो करौ कै मरिहौ बिखु खाइ ॥ ४६ ॥ बिसिख बराबरि नैन तव बिधना धरे बनाइ। लाज कौच मोकौ दयौ चुभत न ताँ ते आइ ॥ ४७ ॥ बने ठने आवत घने हेरत हरत गियान। भोग (मू०ग्रं०८४१) करन कौ कछु नही डहकू बेर समान ॥ ४८ ॥ धन्य बेर हम ते जगत निरखि पथिक कौ लेत।

नयन शोभायुक्त हैं। खग मृग, यक्ष, भुजंग, असुर, सुर, नर, मुनि सभी तुम पर मोहित हैं। शिव-सनकादिक तुम्हारे नेत्रों को देखे ही चले जाते हैं परन्तु यह आश्चर्य है कि तुम्हारे ये सुन्दर नेत्र मेरे हृदय में नहीं चुभते ॥ ४४ ॥ ॥ सवैया ॥ हे प्रियतम! मैं (विचारों में) तुम्हें आलिंगनबद्ध कर पलंग पर लेट जाती हूँ और किसी को भी यह रहस्य नहीं बताती हूँ। इस प्रकार केलि-क्रीड़ा में ही सदैव रात्रि बीत जाती है और इस क्रीड़ा के सम्मुख कामदेव के हाव-भाव भी फीके लगते हैं। सपनों से जागकर लज्जित होती हूँ और डर भी लगता है। इसलिए चित्त में सोचती हूँ कि इस जागने से तो पुनः सोना ही अच्छा है ॥ ४५ ॥ ॥ दोहा ॥ पुनः उस स्त्री ने राजा को सुनाकर कहा कि मैं या तो आज तुम्हारे साथ रमण करूँगी अन्यथा विष खाकर मर जाऊँगी ॥ ४६ ॥ तुम्हारे नयन विधाता ने बाणों की तरह बनाए हैं परन्तु (हि सुन्दरी!) मुझे विधाता ने लज्जा रूपी कवच दिया है, इसलिए ये मुझे नहीं चुभते ॥ ४७ ॥ तुम्हारे नेत्र सुन्दर हैं और देखते ही ज्ञान को हर लेते हैं, परन्तु मेरे लिए ये भोग का आकर्षण न होकर केवल मामूली बेर की तरह हैं ॥ ४८ ॥ बेर का वृक्ष भी धन्य है जो पथिक को देखकर उसे अपने में उलझाकर बलात् बेर खिलाकर फिर उसे घर जाने देता है ॥ ४९ ॥ इस प्रकार

बरबस ख्यावत फल पकरि जान बहुरि घर देत ॥ ४९ ॥ अटपटाइ बातैं करैं मिल्यो चहत पिय संग। मैन बान बाला बिधी बिरह बिकल भ्यो अंग ॥ ५० ॥ ॥ छंद ॥ सुधि जब ते हम धरी बचन गुर दए हमारे। पूत इहै प्रन तोहि प्रान जब लग घट थारे। निज नारी के साथ नेहु तुम नित्त बढैयहु। परनारी की सेज भूलि सुपने हूँ न जैयहु ॥ ५१ ॥ परनारी के भजे सहस बासव भग पाए। परनारी के भजे चंद्र कालंक लगाए। परनारी के हेत सीस दससीस गवायो। हो परनारी के हेत कटक कवरन कौ घायो ॥ ५२ ॥ परनारी सौ नेहु छुरी पैनी करि जानहु। परनारी के भजे काल ब्याप्यो तन मानहु। अधिक हरीफी जानि भोग पर त्रिय जो करही। हो अंत स्वान की म्रितु हाथ लेंडी के मरही ॥ ५३ ॥ बाल हमारे पास देत देसन त्रिय आवहि। मन बाँछत बर माँगि जानि गुर सीस झुकावहि। सिक्ख्य पुत्र त्रिय सुता जानि अपने चित धरियै। हो कहु सुंदरि तिह साथ गवन कैसे कर करियै ॥ ५४ ॥ ॥ चौपई ॥ बचन सुनत क्रुद्धित त्रिय भई। जरि बरि आठ टूक ह्वै गई।

अटपटी बातें करती हुई वह प्रियतम से मिलने के लिए उत्सुक होने लगी। उस स्त्री का अंग-अंग व्याकुल था, क्योंकि काम के कारण विरहाकुल थी ॥ ५० ॥ ॥ छंद ॥ जब से मैंने होश सँभाला है, मुझे मेरे गुरु ने उपदेश दिया है कि हे पुत्र! जब तक तुम्हारे शरीर में प्राण हैं तुम (केवल) अपनी पत्नी के साथ ही स्नेह बढ़ाना और परनारी की शय्या पर भूलकर स्वप्न में भी नहीं जाना ॥ ५१ ॥ परनारी-गमन से इन्द्र को सहस्र भग प्राप्त हुए; इसी से चन्द्रमा को कलंक लगा; रावण ने दस सिर गँवाए और परनारी (द्रौपदी) के कारण ही कौरवों की असंख्य सेना का (उनके समेत) नष्ट हो गया ॥ ५२ ॥ परनारी से प्रेम पैनी छुरी के समान जानो। परनारी से स्नेह का अर्थ मौत का आना मानो। अपने आपको अत्यधिक बलशाली समझकर जो परस्त्री गमन करते हैं वे अंत में खाली हाथ कुत्ते की मौत करेंगे ॥ ५३ ॥ हे रमणी, मेरे पास देश-देशान्तरों से स्त्रियाँ आती हैं और मनोवांछित वरदान प्राप्त कर मुझे गुरु मानकर सिर झुकाकर जाती हैं। शिष्य को पुत्र और स्त्री को पुत्री समझना चाहिए। अतः हे सुन्दरी! तुम ही कहो, इनके साथ भोग क्यों कर किया जाय ॥ ५४ ॥ ॥ चौपाई ॥ यह वचन सुनकर स्त्री क्रोधित हो उठी और जल-भुनकर मानों खंड-खंड हो गई। वह कहने लगी कि अभी चोर-चोर पुकारती हूँ और लोग तुझे मार ही डालेंगे ॥ ५५ ॥ ॥ दोहा ॥

अब ही चोरि चोरि कहि उठिहौ। तुहि को पकरि मारि ही सुटिहौ॥ ५५॥ ॥ दोहरा॥ हसि खेलो सुख सों रमो कहा करत हो रोख। नैन रहे निहुराइ क्यो हेरत लगत न दोख॥ ५६॥ याते हम हेरत नही सुनि सखि हमरे बैन। लखे लगन लगि जाइ जिन बडे बिरहिया नैन॥ ५७॥ ॥ छपै छंद॥ दिजन दीजियहु दान द्रुजन कहि द्रिशटि दिखैयहु। सुखी राखियहु साथ शत्रु सिर खडग बजैयहु। लोक लाज कउ छाडि कछू कारज नहि करियहु। परनारी की सेज पाव सुपने न धरियहु। गुर जबते मुहि कह्यो इहै प्रन लयो सु धारै। हो पर धन पाहन तुलि त्रिया पर मात हमारै॥ ५८॥ ॥ दोहरा॥ सुनत राव के बच स्रवन त्रिय मनि अधिक रिसाइ। चोर चोर कहिकै उठी सिक्ख्यन दियो जगाइ॥ ५९॥ सुनत चोर को बच स्रवन अधिक डर्‌यो नरनाहि। पनी पामरी (मू०ग्रं०८४२) तजि भज्यो सुधि न रही मन माहि॥ ६०॥

॥ इति स्त्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इकीसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २१॥ ४३८॥ अफजूँ॥

तुम हँस-खेलकर सुखपूर्वक रमण करो; क्यों रुष्ट होते हो। मेरे नयन तुम्हें बुला रहे हैं क्या इन्हें देखकर तुम्हें कष्ट नहीं होता॥ ५६॥ इसीलिए हे सुन्दरी! मैं तुम्हारी ओर देख नहीं रहा हूँ; क्यों ये नयन बड़े विरही होते हैं, कहीं देखते-देखते लग ही न जायँ॥ ५७॥ ॥ छप्पय छंद॥ विप्रों को दान दिया जाता है और दुर्जनों को आँखें दिखाई जाती हैं। मित्रों को सुख दिया जाता है और शत्रु के सिर पर खड़ग से बजाकर वार किया जाता है। लोकलाज का कोई भी कार्य नहीं किया जाता है, इसलिए परनारी की शय्या पर भूलकर स्वप्न में भी पाँव नहीं रखा जाता है। गुरु ने जब से यह उपर्युक्त प्रण करवाया है तब से पराया धन मेरे लिए पत्थर के समान और परनारी माता के समान है॥ ५८॥ ॥ दोहा॥ राजा के वचन सुनकर स्त्री मन में अत्यधिक क्रोधित हो उठी और 'चोर-चोर' की पुकार कर उसने सिक्खों को जगा दिया॥ ५९॥ वह राजा 'चोर-चोर' पुकार कानों से सुनकर अत्यधिक डर गया और सुध-बुध भूलकर जूता छोड़कर भाग निकला॥ ६०॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री भूप संवाद में इक्कीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३१॥ ४३८॥ अफजू॥

अथ बाईसवों चरित्र कथनं॥

॥ दोहरा॥ सुनत चोर के बच स्रवन उठ्यो राइ डर धार। भज्यो जाइ डर पाइ मन पनी पामरी डारि॥ १॥ चोरि सुनत जागे सभै भजै न दीना राइ। कदम पाँच सातक लगे मिले सिताबी आइ॥ २॥ ॥ चौपई॥ चोर बचन सभ ही सुनि धाए। काढे खड़ग राइ प्रति आए। कूकि कहैं तुहि जान न दैहैं। तुहि तसकर जमधाम पठैहैं॥ ३॥ ॥ दोहरा॥ आगे पाछे दाहने घेरि दसो दिस लीन। पैंड भजन कौ ना रह्यो राइ जतन यों कीन॥ ४॥ वाकी कर दारी धरी पगिया लई उतारि। चोर चोर करि तिह गह्यो द्वैक मुतहरी झारि॥ ५॥ लगे मुतहरी के गिर्‌यो भूमि मूरछना खाइ। भेद न काहूँ नर लह्यो मुसकैं लई चढ़ाइ॥ ६॥ लात मुसट बाजन लगी सिख्य पहूँचे आइ। भ्रात भ्रात त्रिय कहि रही कोऊ न सक्यो छुराइ॥ ७॥ ॥ चौपई॥ जूती बहु तिह मूँड लगाई। मुसकैं ता की ऐठ चड़ाई। बंदसाल तिह दिया पठाई।

बाईसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा॥ चोर की बात सुनकर राजा डरकर उठा और जूता भी भूलकर भागने लगा॥ १॥ चोर की पुकार सुनकर सभी जग गए और लोगों ने राजा को भागने नहीं दिया तथा पाँच-सात क़दम के बाद ही उससे आ मिले॥ २॥ ॥ चौपाई॥ 'चोर' की पुकार सुनकर सभी भागे और उस राजा के खिलाफ तलवारें निकाल लीं। वे लोग चिल्लाने लगे कि जाने नहीं देंगे और हे तस्कर! तुम्हें यमलोक भेजेंगे॥ ३॥ ॥ दोहा॥ आगे-पीछे, दायें-बायें सभी दिशाओं से उसे घेर लिया। राजा ने यत्न तो किया पर भागने के लिए कोई रास्ता नहीं बचा॥ ४॥ लोगों ने हाथ पकड़कर उसकी दाढ़ी पकड़ ली और उसकी पगड़ी उतार ली। उसे 'चोर-चोर' कहकर दो-तीन डंडे मारकर पकड़वा लिया॥ ५॥ डंडा लगने से राजा धरती पर गिर पड़ा और मूर्च्छित हो गया। लोगों में कोई भी रहस्य को न समझा और उन्होंने राजा के हाथ बाँध लिये॥ ६॥ लात और मुक्के चलने लगे तथा अन्य शिष्य भी आ पहुँचे। स्त्री भाई-भाई चिल्ला रही थी (तो लोगों ने समझा कि इसके भाई ने चोरी की है अतः उसके भाई को पकड़ लिया) और उसे कोई न छुड़ा सका॥ ७॥ ॥ चौपाई॥ उसके मुँह पर बहुत से जूते मारे गए और उसके हाथ बाँध लिये

आनि आपनी सेज सुहाई ॥ ८ ॥ इह छल खेलि राइ भज आयो। बंदसाल त्रिय भ्रात पठायो। सिख्यन भेद अभेद न पायो। वाही कौ तसकर ठहरायो ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे बाईसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२ ॥ ४४७ ॥ अफजूँ ॥

अथ तेईसवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भयो प्रात सभ ही जन जागे। अपने अपने कारज लागे। राइ भवन ते बाहर आयो। सभा बैठ दीवान लगायो ॥ १ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रात भए तवनै त्रिया तिह तजि रिस उपजाइ। पनी पामरी जो हुते सभहिन दए दिखाइ ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ राइ सभा महि बचन उचारे। पनी पामरी हरे हमारे। ताँहि सिख्य जो हमैं बतावै। ता ते काल निकट नहि आवै ॥ ३ ॥ (मू०पृ०८४३) ॥ दोहरा ॥ बचन सुनत गुर बक्त्र तें सिख्य न सके दुराइ।

गये। उसे बंदीगृह भेज दिया और वह स्त्री भी अन्ततः अपने पलंग पर सो गई ॥ ८ ॥ इस प्रकार यह प्रपंच खेलकर राजा भागकर आ गया और बंदीगृह में उस स्त्री का भाई भेज दिया गया। कोई शिष्य रहस्य को न जान सका और उसके भाई को ही सबने चोर ठहरा दिया ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र में मन्त्री-भूप-संवाद में बाईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२ ॥ ४४७ ॥ अफजू ॥

तेईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ प्रातःकाल सब जगे और अपने-अपने कामों में लग गए। राजा भी अपने भवन से बाहर आया और सभा में बैठा ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥ प्रातःकाल उस स्त्री ने प्रेम त्यागकर क्रोध में आते हुए वे जूते सबको दिखा दिए ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ इधर राजा ने सभा में कहा कि कोई हमारा जूता चोरी करके ले गया है। जो शिष्य उस व्यक्ति के बारे में (पता लगाकर) बताएगा, मृत्यु उसके निकट नहीं आएगी ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ गुरुमुख से वचन सुनकर सिक्ख छुपा न सके और जूते-कंबल समेत उस स्त्री के बारे में बता

पनी पामरी के सहित सो त्रिय दई बताइ ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ तबै राइ यौ बचन उचारे। गहि ल्यावहु तिह तीर हमारे। पन्ही पामरी सँग लै ऐयहु। मोरि कहे बिनु त्रास न दैयहु ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनत राइ के बचन को लोग परे अरराइ। पन्ही पामरी त्रिय सहित ल्यावत भए बनाइ ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कहु सुंदरि किह काज बस्त्र तैं हरे हमारे। देख भटन की भीरि त्रास उपज्यो नहि थारे। जो चोरी जन करै कहौ ता कौ क्या करियै। हो नारि जानि के टरौ नतर जिय ते तुहि मरियै ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ पर पियरी मुख पर गई नैन रही निहुराइ। धरक धरक छतिया करै बचन न भाख्यो जाइ ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हम पूछहिगे याहि न तुम कछु भाखियो। याही को घर माँहि भली बिधि राखियो। निरनौ करिहैं एक इकांत बुलाइकै। हो तब दैहैं इह जान हिदै सुखु पाइकै ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रात भयो त्रिय बहुरि बुलाई। सकल कथा कहि ताँहि सुनाई। तुम कुपि हम परि चहित बनायो। हमहूँ तुम कह चरित दिखायो ॥ १० ॥

दिया ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा ने कहा कि उसे पकड़कर हमारे पास ले आओ। कंबल, जूता साथ ले आना और मेरे कहे बिना उसे डराना-धमकाना नहीं ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा के वचन सुनकर लोग टूट पड़े और कंबल-जूते समेत उस स्त्री को ले आए ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे सुन्दरी! बताओ तुमने मेरे वस्त्र क्यों चुराए। इन शूरवीरों को भीड़ (पहरा) देखकर भी तुम्हें डर नहीं लगा। जो चोरी करे उसे क्या सज़ा दी जानी चाहिए। तुम्हें स्त्री जानकर छोड़ देता हूँ अन्यथा तुम्हें मार डालना चाहिए ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ उसका चेहरा पीला पड़ गया और आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगी। उसकी छाती धड़कने लगी और उसके मुँह से बोल नहीं निकल रहा था ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हम तुमसे पूछ रहे हैं पर तुम कुछ नहीं कह रही हो। ठीक है तुम्हारा निर्णय एकान्त में किया जायगा और तब तुम्हें बिना किसी कष्ट के जाने दिया जायगा ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रातः उस स्त्री को पुनः बुलाया गया और उसे सब कुछ बताया गया। तुमने हमारे ऊपर कुपित होकर हमें जाल में फँसाया; परन्तु हमने भी तुम्हें चक्कर में डाल दिया ॥ १० ॥ तब उसका भाई बंदीगृह से छोड़

ता को भ्रात बंदि ते छोर्‍यो। भाँति भाँति तिह त्रियहि निहोर्‍यो। बहुरि ऐस जिय कबहूँ न धरियहु। मो अपराध छिमापन करियहु॥ ११॥ ॥ दोहरा॥ छिमा करहु अब त्रियह मैं बहुरि न करियहु राँधि। बीस सहंसर टका तिस दई छिमाही बाँधि॥ १२॥ ॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तेईसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २३॥ ४५८॥ अफजूँ॥

अथ चौबीसमो चरित्र कथनं॥

॥ सोरठा॥ दीनो बहुरि पठाइ बंदसाल पित पूत कउ। लीनो बहुरि बुलाइ भोर होत अपुने निकटि॥ १॥ ॥ चौपई॥ पुनि मंत्री इक कथा उचारी। सुनहु राइ इक बात हमारी। एक चरित त्रिय तुमहि सुनाऊँ। ता ते तुमकौ अधिक रिझाऊँ॥ २॥ उतर देश त्रिपति इक भारो। सूरज बंस माझि उजियारो। चंद्रमती ताकी पटरानी। मानहु छीर सिंध मथिआनी॥ ३॥ एक सुता ता के भव लयो ॥ (मू०ग्रं०८४४)॥ जानक डारि गोद रवि दयो।

दिया और उस स्त्री को भिन्न-भिन्न तरीके से समझाया गया। उससे (राजा ने) कहा कि मेरा अपराध क्षमा करो, परन्तु दुबारा कभी ऐसी बात मन में मत लाना॥ ११॥ ॥ दोहा॥ हे स्त्री! अब मुझे क्षमा करो, मैं भी इस झगड़े को और अधिक नहीं बढ़ाना चाहता। उसके बाद उस स्त्री को छ:माही वृत्ति के रूप में बीस हज़ार टके बाँध दिये गए॥ १२॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तेईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २३॥ ४५८॥ अफजूँ॥

॥ चौबीसवाँ चरित्र-कथन॥

॥ सोरठा॥ पिता ने पुत्र को बंदीगृह में पहुँचा दिया और भोर होते ही उसे पुन: बुला लिया॥ १॥ ॥ चौपाई॥ पुन: मंत्री ने एक कथा कही कि हे राजन! तुम मेरी एक बात सुनो। मैं तुमको एक स्त्री का प्रपंच सुनाकर अत्यधिक प्रसन्न करूँगा॥ २॥ उत्तर देश का एक महाबली सूर्यवंश का प्रतापी राजा था। उसकी पटरानी चंद्रमती थी जिसे मानों क्षीरसागर से मथने के पश्चात् निकाला गया हो॥ ३॥ उनके यहाँ एक पुत्री पैदा हुई जो मानों स्वयं सूर्य ने उनकी गोदी में डाली हो। उसका यौवन भी अत्यधिक रूप से इतना बढ़ा मानो चन्द्रमा की कला समुद्र मथकर पैदा की गई हो॥ ४॥

जोबन जेब अधिक तिह बाढी। मानहु चंद्र सार मथि काढी॥ ४॥ धर्‍यो सुमेर कुअरि तिह नामा। जाँ सम और न जग मै बामा। सुंदरि तिहूँ भवन महि भई। जानुक कला चंद्र की वई॥ ५॥ जोबन जेब अधिक तिह धरी। मैन सु नार भरनु जन भरी। वा की प्रभा जात नहि कही। जानक फूल मालती रही॥ ६॥ ॥ दोहरा॥ जगै जुबन की जेब के झलकत गोरे अंग। जनु करि छीर समुंद्र मै दमकत छीर तरंग॥ ७॥ ॥ चौपई॥ दच्छिन देस त्रिपत वह बरी। भाँति भाँति के भोगन भरी। दोइ पुत्र कंन्या इक भई। जानुक रासि रूपि की वई॥ ८॥ कितकि दिनन राजा वहु मरियो। तिह सिर छत्र पूत बिधि धरियो। को आग्या ता की ते टरै। जो भावै चित मै सो करै॥ ९॥ ऐस भाँति बहु काल बिहान्यो। चड्यो बसंत सभन जिय जान्यो। ता ते पिय बिनु रह्यो न परै। बिरह बान भए हियरा जरै॥ १०॥ ॥ दोहरा॥ बिरह बान गाड़े लगे कैसक बंधै धीर। मुख फीकी बातै करै पेट पिया की पीर॥ ११॥ सर अनंग के तन गडे कढै दसऊअलि फूटि।

सुमेरकुँवरि उसका नाम रखा गया और उसके समान संसार में अन्य कोई स्त्री नहीं थी। वह तीनों लोकों की सुन्दरी थी और ऐसी लगती थी मानों चन्द्रमा की शक्ति हो॥ ५॥ वह अत्यधिक सुन्दरी थी और रति भी उसके सामने पानी भरती थी। उसकी शोभा अवर्णनीय थी वह मानो मालती के फूल के समान लग रही थी॥ ६॥ ॥ दोहा॥ यौवनपूर्ण उसके अंग ऐसे छलक रहे थे मानो क्षीरसमुद्र में दूध की तरंगे उठ रही हों॥ ७॥ ॥ चौपाई॥ वह दक्षिण देश के राजा के साथ ब्याह दी गई और भिन्न-भिन्न प्रकार के भोग भोगने लगी। उसके दो पुत्र और एक कन्या हुई वे भी मानों रूप की राशि थे॥ ८॥ कितने ही दिनों बाद वह राजा मर गया और छत्र उसके पुत्र के सिर पर धारण किया गया। उसकी आज्ञा भला कौन टाल सकता था। वह जो चाहता था करता था॥ ९॥ इस प्रकार बहुत समय बीता और बंसत ऋतु का मौसम आ गया। उससे अब प्रियतम के बिना रहा नहीं जाता था और विरह-बाणों से उसका हृदय जला जाता था॥ १०॥ ॥ दोहा॥ विरह के गहरे बाण लगने से उससे धैर्य नहीं बँध रहा था। वह मुख से तो फीकी-फीकी बातें करती थी परन्तु उसके मन में प्रियतम के लिए तड़प थी॥ ११॥